समक्ष वी.एम. जैन न्यायमूर्ति

किशन सिंह और अन्य, याचिकाकर्ता

बनाम

मेसर्स ईस्ट इंडिया कॉटेन मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड
और अन्य - उत्तरदाता

2003 के सीआर नंबर 4088

7 नवम्बर, 2003

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908- धारा 96- सिविल कोर्ट द्वारा वाद को सुनवाई योग्य न मानते हुए किसी वाद को खारिज कर देना और यह कि न्यायालय के पास मुकदमा चलाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है - प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी अपील को सुनवाई योग्य न मानते हुए खारिज कर दिया - न तो निचली अदालत वाद को वापस करने का आदेश दे रही है और न ही वाद को खारिज कर रही है - ट्रायल कोर्ट ने एक डिक्री शीट तैयार करने का आदेश भी दिया है- ऐसा निर्णय और ट्रायल कोर्ट की डिक्री को अपील योग्य माना गया - याचिका स्वीकार की गई।

यह माना गया कि ट्रायल कोर्ट ने मुकदमे को खारिज कर दिया, यह मानते हुए कि मुकदमा अपने वर्तमान रूप में सुनवाई योग्य नहीं था और यहां तक कि अन्यथा सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे पर विचार करने और निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। नतीजतन, मुकदमा खारिज कर दिया गया और एक डिक्री शीट तैयार की गई। यह ऐसा मामला नहीं था जहां ट्रायल कोर्ट ने उचित प्राधिकारी के समक्ष दायर किए जाने वाले वाद को वापस करने का आदेश दिया था, न कि यह एक ऐसा मामला था जहां ट्रायल कोर्ट ने वाद को खारिज कर दिया था। दूसरी ओर, ट्रायल कोर्ट ने वादी के वाद को खारिज कर दिया था और इस संबंध में डिक्री शीट भी तैयार की थी। ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित इस तरह के निर्णय और डिक्री निश्चित रूप से जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील योग्य थी और यह नहीं कहा जा सकता था कि जिला न्यायाधीश के समक्ष कोई अपील नहीं थी। इस तरह की अपील सीपीसी की धारा 96 के तहत सुनवाई योग्य होगी, जिसमें प्रावधान है कि अपील मूल अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने वाले किसी भी न्यायालय द्वारा पारित प्रत्येक डिक्री से अपील होगी।

(पैरा 5)

याचिकाकर्ताओं की ओर से अधिवक्ता एपी भंडारी।

पी.के. मुतनेजा, अधिवक्ता, प्रतिवादियों के लिए।

निर्णय

वी.एम. जैन न्यायमूर्ति

1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत यह याचिका याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर की गई है, जिसमें अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित 25 जून, 2003 के आदेश को चुनौती दी गई है, जिसमें अपील को सुनवाई योग्य नहीं मानते हुए खारिज कर दिया गया था।

2. वादी-याचिकाकर्ताओं ने प्रतिवादी-प्रतिवादियों के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर किया था। प्रतिवादियों द्वारा मुकदमे का विरोध किया गया था। निम्नलिखित मुद्दे तैयार किए गए थे .—

"1. क्या वादी स्थायी निषेधाज्ञा के आदेश का हकदार है जैसा कि प्रार्थना की गई है। ओ पी पी

2. क्या वादी का मुकदमा वर्तमान रूप में सुनवाई योग्य नहीं है। (ओ पी डी)।

3. क्या इस सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र नहीं है।

4. राहत."

3. उपर्युक्त चार मुद्दों में से, मुद्दा संख्या 2 और 3 को 16 मई, 2003 के आदेश द्वारा प्रारंभिक मुद्दों के रूप में माना गया था। इन दोनों मुद्दों को ट्रायल कोर्ट द्वारा एक साथ निपटाया गया था और प्रतिवादियों के पक्ष में फैसला किया गया था और यह माना गया था कि मुकदमा वर्तमान रूप में सुनवाई योग्य नहीं था और सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे पर विचार करने और निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। इसके परिणामस्वरूप, वादी के वाद को खारिज कर दिया गया और यह निदेश दिया गया कि दिनांक 30 मई, 2003 के निर्णय और डिक्री के तहत डिक्री-शीट तैयार की जाए। इससे व्यथित होकर वादी ने गर्मी की छुट्टियों के दौरान जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील दायर की। विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश (अवकाशकालीन न्यायाधीश) ने दिनांक 25 जून, 2003 के आदेश के तहत उक्त अपील को प्रारंभिक चरण में ही यह कहते हुए खारिज कर दिया कि 30 मई, 2003 के उक्त निर्णय और डिक्री के विरुद्ध वादी द्वारा दायर अपील विचार योग्य नहीं है और इसे नियमित सुनवाई के लिए स्वीकार नहीं किया जा सकता है और इसे अस्वीकार करने का आदेश दिया जाता है।. अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित 25 जून, 2003 के इस आदेश से व्यथित होकर वादी ने इस

न्यायालय में वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की। प्रस्ताव की सूचना जारी की गई।

4. याचिकाकर्ता के वकील ने मेरे समक्ष प्रस्तुत किया कि ट्रायल कोर्ट ने वादी के मुकदमे को यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि मुकदमा सुनवाई योग्य नहीं था और सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। एक डिक्री-शीट भी तैयार की गई थी। ट्रायल कोर्ट के उपरोक्त फैसले और डिक्री से व्यथित, वादी ने जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील दायर की। अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने गर्मी की छुट्टियों के दौरान अवैध रूप से अपील को खारिज कर दिया और कहा कि ट्रायल कोर्ट के उपरोक्त फैसले और डिक्री के खिलाफ ऐसी कोई अपील नहीं है और अपील सुनवाई योग्य नहीं है और इसे खारिज करने का आदेश दिया। यह प्रस्तुत किया गया है कि जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 30 मई, 2003 के पूर्वोक्त निर्णय और डिक्री के खिलाफ सुनवाई योग्य थी, जिसके तहत वादी के मुकदमे को इस आधार पर खारिज कर दिया गया था कि यह सुनवाई योग्य नहीं था और सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। यह प्रस्तुत किया गया है कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने **स्वर्ण और अन्य बनाम ग्राम पंचायत, मलिकपुर** [1](1) पर भरोसा करते हुए अपील को खारिज करके कानून में गलती की थी। दूसरी ओर, प्रतिवादी-प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने मेरे समक्ष प्रस्तुत किया कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने अपील को खारिज करने में पूरी तरह से उचित था, क्योंकि यह सुनवाई योग्य नहीं था क्योंकि विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 30 मई, 2003 के फैसले और डिक्री के खिलाफ कोई अपील नहीं थी। निर्भरता रखी गई स्वर्ण के मामले (सुप्रा) के साथ-साथ **दुर्गा प्रसाद बनाम नवीन चंद्र और अन्य** (2) के रूप में रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर।

5. पक्षकारों के वकीलों को सुनने और रिकॉर्ड को देखने के बाद, मेरी राय में, वर्तमान पुनरीक्षण याचिका को स्वीकार किया जाना चाहिए और अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित 25 जून, 2003 के आदेश को रद्द कर दिया जाना चाहिए और मामले को कानून के अनुसार नए सिरे से अपील के निर्णय के लिए भेज दिया जाना चाहिए। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, पक्षों की दलीलों पर, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने विभिन्न मुद्दों को तैयार किया था और ऊपर उल्लिखित

---

1. 1998 (2) पी.एल.जे. 172
2. 1996 (3) एस.सी.सी. 300

दो मुद्दों को प्रारंभिक मुद्दों के रूप में माना गया था। दोनों पक्षों को सुनने के बाद, विद्वान ट्रायल कोर्ट ने माना था कि वर्तमान रूप में मुकदमा सुनवाई योग्य नहीं था और सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, परिणामस्वरूप, मुकदमा खारिज कर दिया गया था और यह निर्देश दिया गया था कि डिक्री-शीट तदनुसार तैयार की जाए। इन निर्देशों के अनुपालन में, ट्रायल कोर्ट ने डिक्री-शीट भी तैयार की थी, जिसमें दिखाया गया था कि वादी द्वारा दायर मुकदमा खारिज कर दिया गया था। ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 30 मई, 2003 के उपरोक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित, वादी ने जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील दायर की। वादी की इस अपील को अतिरिक्त जिला न्यायाधीश (अवकाश न्यायाधीश) ने गर्मियों की छुट्टियों के दौरान यह देखते हुए खारिज कर दिया था कि 30 मई, 2003 के निर्णय और डिक्री के खिलाफ, कोई अपील सुनवाई योग्य नहीं थी और पीड़ित व्यक्ति के लिए उपलब्ध एकमात्र उपाय उक्त आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण दायर करना था। निर्भरता रखी गई स्वर्ण के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर। मेरी राय में, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने दिनांक 30 मई, 2003 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध दिनांक 25 जून, 2003 के आदेश के माध्यम से वादी की अपील को खारिज करके अवैधता की है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वादी ने घोषणा और निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर किया था। ट्रायल कोर्ट ने उक्त मुकदमे को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि मुकदमा अपने वर्तमान रूप में सुनवाई योग्य नहीं था और यहां तक कि अन्यथा सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे पर विचार करने और निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। नतीजतन, मुकदमा खारिज कर दिया गया और एक डिक्री-शीट तैयार की गई। यह ऐसा मामला नहीं था जहां ट्रायल कोर्ट ने उचित प्राधिकारी के समक्ष दायर किए जाने वाले वाद को वापस करने का आदेश दिया था, न ही यह एक ऐसा मामला था जहां ट्रायल कोर्ट ने वाद को खारिज कर दिया था। दूसरी ओर, ट्रायल कोर्ट ने वादी के वाद को खारिज कर दिया था और इस संबंध में एक डिक्री-शीट भी तैयार की थी। मेरी राय में, ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित इस तरह के निर्णय और डिक्री, निश्चित रूप से जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील योग्य थे और यह नहीं कहा जा सकता था कि जिला न्यायाधीश के समक्ष कोई अपील नहीं थी। इस तरह की अपील सीपीसी की धारा 96 के तहत सुनवाई योग्य होगी, जिसमें प्रावधान है कि मूल अधिकार क्षेत्र का उपयोग करने वाले किसी भी न्यायालय द्वारा पारित प्रत्येक डिक्री से अपील होगी। मेरी राय में, विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने सीपीसी की धारा 104 और आदेश 43 नियम 1 के प्रावधानों का उल्लेख करके कानून में गलती की। ट्रायल कोर्ट ने ऐसा कोई आदेश पारित नहीं किया था जिसे वादी द्वारा अपील या संशोधन के माध्यम से चुनौती देने की आवश्यकता थी। वास्तव में, ट्रायल कोर्ट ने वादी के मुकदमे को खारिज कर दिया था और ऐसा करते हुए, ट्रायल कोर्ट ने वादियों के खिलाफ निर्णय और

डिक्री पारित की थी। सीपीसी की धारा 96 के तहत ट्रायल कोर्ट के उक्त फैसले और डिक्री के खिलाफ अपील होगी। यदि ट्रायल कोर्ट ने केवल कुछ मुद्दों पर फैसला किया था और पीड़ित पक्ष इसे चुनौती देना चाहता था, तो निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि ऐसा आदेश धारा 104 या आदेश 43 नियम 1, सीपीसी के तहत अपील योग्य नहीं था और ऐसी स्थिति में, उक्त पक्ष को संशोधन के माध्यम से इसे चुनौती देने की आवश्यकता होगी। हालांकि, वर्तमान मामले में स्थिति पूरी तरह से अलग है। ट्रायल कोर्ट ने न केवल वादी के खिलाफ दो मुद्दों पर फैसला किया था, बल्कि परिणामस्वरूप वादी के मुकदमे को इस निर्देश के साथ खारिज कर दिया था कि डिक्री-शीट भी तैयार की जाए और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, डिक्री-शीट भी तैयार की जाए। ऐसी स्थिति में, वादी को सीपीसी की धारा 96 के तहत प्रदान की गई अपील दायर करके उक्त निर्णय और डिक्री को चुनौती देने का अधिकार था।

6. स्वर्ण और अन्य बनाम ग्राम पंचायत, मलिकपुर (सुप्रा), जिस पर प्रतिवादियों के विद्वान वकील द्वारा भरोसा किया गया है, मेरी राय में, वर्तमान मामले के तथ्यों पर कोई लागू नहीं होगा। रिपोर्ट किए गए मामले में, वादी/याचिकाकर्ताओं ने प्रतिवादी-प्रतिवादियों को वाद भूमि पर उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए एक मुकदमा दायर किया था। उक्त वाद को प्रतिवादी-पंचायत द्वारा यह आरोप लगाते हुए चुनौती दी गई थी कि सिविल कोर्ट का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। कुछ मुद्दे तैयार किए गए थे। सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार से संबंधित मुद्दे को प्रारंभिक मुद्दे के रूप में माना गया था। दिनांक 12 सितम्बर, 1995 के आदेश के तहत ट्रायल कोर्ट ने प्रतिवादी-पंचायत के खिलाफ उक्त मुद्दे पर फैसला किया और यह माना गया कि सिविल कोर्ट के पास उक्त मुकदमे की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र था। ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 12 सितंबर, 1995 के उक्त आदेश को प्रतिवादी-ग्राम पंचायत द्वारा अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के समक्ष अपील के माध्यम से चुनौती दी गई थी। विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने दिनांक 26 अक्तूबर, 1995 के आदेश के तहत ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखते हुए कहा कि सिविल कोर्ट के पास उक्त वाद की सुनवाई करने का अधिकार क्षेत्र है और तदनुसार अपील को खारिज कर दिया गया था। तदुपरांत, प्रतिवादी-ग्राम पंचायत ने समीक्षा याचिका दायर की और अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने दिनांक 6 दिसम्बर, 1996 के आदेश के तहत समीक्षा आवेदन स्वीकार कर लिया, निचली अदालत के आदेश को निरस्त कर दिया और कहा कि सिविल न्यायालय के पास वाद की सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। उसी से व्यथित, वादी ने इस न्यायालय में पुनरीक्षण याचिका दायर की। वादी-याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 12 सितंबर, 1995 के आदेश के खिलाफ कोई भी अपील अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई योग्य नहीं थी क्योंकि उक्त आदेश न तो डिक्री था और न ही निर्णय था और अपील योग्य नहीं था।

सीपीसी की धारा 96, 104 और आदेश 43 नियम 1 के प्रावधानों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि किसी निष्कर्ष के खिलाफ कोई अपील सुनवाई योग्य नहीं होगी और एक बार जब कोई अपील सुनवाई योग्य नहीं थी, तो ट्रायल कोर्ट के आदेश को रद्द करते हुए अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश टिकाऊ नहीं था और अधिकार क्षेत्र के बिना था और यह माना गया था कि उपाय, यदि पीड़ित व्यक्ति के पास कोई उपलब्ध है, तो वह ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण याचिका दायर करना था। मेरी राय में, स्वर्ण के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का वर्तमान मामले के तथ्यों पर कोई लागू नहीं होगा। रिपोर्ट किए गए मामले में, ट्रायल कोर्ट ने वादी के पक्ष में सिविल कोर्ट के अधिकार क्षेत्र के बारे में फैसला किया था और यह माना गया था कि सिविल कोर्ट के पास उक्त मुकदमे पर विचार करने और फैसला करने का अधिकार क्षेत्र था। ऐसी परिस्थितियों में, मुकदमे का फैसला अभी भी ट्रायल कोर्ट द्वारा किया जाना था। वादी के पक्ष में केवल एक मुद्दे का फैसला किया गया था, जिसमें कहा गया था कि सिविल कोर्ट के पास अधिकार क्षेत्र था। ऐसी स्थिति में, इस अदालत ने सही कहा था कि इस तरह का आदेश कानून के किसी भी प्रावधान के तहत अपील योग्य नहीं था और उपलब्ध एकमात्र उपाय एक पुनरीक्षण याचिका दायर करना था। हालांकि, जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, स्थिति पूरी तरह से अलग है। वर्तमान मामले में, ट्रायल कोर्ट ने माना था कि मुकदमा वर्तमान रूप में सुनवाई योग्य नहीं था और सिविल कोर्ट के पास वर्तमान मुकदमे पर विचार करने और निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। नतीजतन, मुकदमा खारिज कर दिया गया और एक डिक्री-शीट तैयार की गई। उसके बाद, ट्रायल कोर्ट के पास फैसला करने के लिए कुछ भी नहीं बचा था। ऐसी परिस्थितियों में, मेरी राय में, मुकदमे को खारिज करने वाले ट्रायल कोर्ट के फैसले और डिक्री, निश्चित रूप से जिला न्यायाधीश के पास अपील योग्य थी और अपील को केवल इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता था कि अपील अधिकार क्षेत्र से संबंधित मुद्दे पर निष्कर्ष के खिलाफ थी। ऐसा प्रतीत होता है कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश इस बात का गुण जानने में विफल रहे थे कि वर्तमान मामले में, मुकदमे को ट्रायल कोर्ट द्वारा यह कहते हुए खारिज कर दिया गया था कि सिविल कोर्ट का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, जबकि रिपोर्ट किए गए मामले में, ट्रायल कोर्ट ने माना था कि सिविल कोर्ट के पास अधिकार क्षेत्र था और मुकदमा अभी भी ट्रायल कोर्ट के समक्ष लंबित था।

7. दुर्गा प्रसाद के मामले (सुप्रा) में, जिस पर प्रतिवादी-प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने भरोसा किया था, प्रतिवादियों ने विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमा दायर किया था। वादी के साक्ष्य 12 मार्च, 1991 को बंद कर दिए गए थे और प्रतिवादियों के साक्ष्य को 20 मार्च, 1991 को दर्ज करने का निर्देश दिया

गया था और मामले को समय-समय पर 11 जनवरी, 1994 तक स्थगित कर दिया गया था, जिस तारीख को स्थगन की मांग की गई थी और स्थगन के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था और दलीलों को सुनने के बाद, फैसला सुरक्षित रखा गया और 14 जनवरी, 1994 को सुनाया गया। इसके बाद, 27 जनवरी, 1994 को सीपीसी के आदेश 9 नियम 13 के तहत डिक्री को रद्द करने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। जब उक्त आवेदन लंबित था, तो अपीलकर्ता ने आवेदन की विचारणीयता पर आपत्ति जताते हुए एक आवेदन दायर किया और प्रार्थना की कि इसे प्रारंभिक बिंदु के रूप में सुना जाए। उक्त आवेदन को ट्रायल कोर्ट द्वारा 7 अक्टूबर, 1995 को खारिज कर दिया गया था और उक्त आदेश के खिलाफ, अपीलकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर की थी और इसे उच्च न्यायालय द्वारा 21 दिसंबर, 1995 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था और उसी के खिलाफ, अपीलकर्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति अपील दायर की थी। यह उन परिस्थितियों में था कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह माना गया था कि यदि लागू आदेश धारा 96 के तहत या सीपीसी के आदेश 43 नियम 1 के साथ 104 के तहत अपील योग्य नहीं था, तो भी एक संशोधन सुनवाई योग्य था और उस उपाय का लाभ उठाने के बजाय, अपीलकर्ता ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अधिकार क्षेत्र का उपयोग किया जिसकी आवश्यकता नहीं थी। यह भी कहा गया कि सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित प्रक्रिया को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत बनाए रखने योग्य उपाय का लाभ उठाकर बाय-पास नहीं किया जा सकता है। तदनुसार, माननीय उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया।. मेरी राय में, इस प्राधिकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का वर्तमान मामले के तथ्यों पर कोई प्रभाव नहीं होगा और प्रतिवादी/प्रतिवादी इस प्राधिकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून से कोई लाभ नहीं उठा सकते हैं।

1. ऊपर मेरी विस्तृत चर्चा को ध्यान में रखते हुए, मेरी राय में, ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 30 मई, 2003 के निर्णय और डिक्री के खिलाफ अपील जिला न्यायाधीश के समक्ष सुनवाई योग्य थी और विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने उक्त अपील को यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि अपील सुनवाई योग्य नहीं थी। तदनुसार, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 26 मई, 2003 के आदेश को निरस्त किया जाता है और मामले को कानून के अनुसार गुण-दोष के आधार पर अपील पर निर्णय लेने के लिए जिला न्यायाधीश, फरीदाबाद को भेज दिया जाता है। यह निर्देश दिया जाता है कि जिला न्यायाधीश, फरीदाबाद, या तो स्वयं अपील पर निर्णय लेंगे या कानून के अनुसार किसी अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को इसे सौंपेंगे। पक्षकारों को उनके वकील

के माध्यम से आगे की कार्यवाही के लिए 15 दिसम्बर, 2003 को फरीदाबाद के जिला न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित होने का निदेश दिया जाता है।

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

रजत अरोड़ा
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
चंडीगढ़ न्यायिक अकादमी